शहर कैसे बन जाते हैं गर्मी के टापू

डॉ. महेश परिमल

वैज्ञानिक कहते हैं कि मौसम बदल रहा है। पर सच तो यह है कि इंसान उससे तेज़ी से बदल रहा है। मायानगरी मुम्बई का मौसम पहले हमेशा एक जैसा हुआ करता था। वहां के लोगों ने कभी स्वेटर नहीं देखा था। न ही वहां रहकर पहना। पर अब मुम्बई बदल रही है। ठंड भी लगने लगी है। लोग स्वेटर पहनने लगे हैं। उधर गर्मी में लू भी चलने लगी है। अब कई मकान भट्टी की तरह तपने भी लगे हैं।

इसका सीधा-सा कारण है कि अब वहां भी मकान कांक्रीट के बनने लगे हैं। हम विदेशों की तरह अपने मकानों में सीमेंट का उपयोग करते हैं। वास्तव में यह उनके लिए उपयोगी है, जहां हमेशा ठंड होती है। वहां के हिसाब से सीमेंट के मकान बनाना अच्छा है, पर हमारे देश के लिए यह उचित नहीं है। लेकिन अंधानुकरण के कारण हमने यह सोचना ही छोड़ दिया है कि कहीं यह हमारे लिए प्राणघातक तो नहीं?

मौसम विज्ञानियों की नज़र में किसी भी शहर के कुछ भाग ऐसे होते हैं, जो दूसरे भागों से अपेक्षाकृत अधिक गर्म होते हैं। इन दोनों स्थानों के तापमान में इतना अंतर होता है कि इसके कारण गर्म स्थान को 'हीट पॉकेट' कहते हैं।

मुम्बई की कोलाबा वेधशाला की ओर से शहर के किस भाग में गर्मी अधिक है, इसका हिसाब लगाया जाता रहा है। इसका अध्ययन होता रहा है। सन 1976 में गर्मी वाले क्षेत्र का सर्वेक्षण किया गया था, तब उन्हें एक भी हीट पॉकेट नहीं मिला था। अब मुम्बई के कई इलाके हीट पॉकेट हो गए हैं।

आज देश की आबादी के साथ-साथ मकानों का निर्माण इस तरह से होने लगा है कि वहां ऑक्सीजन खोजनी पड़ती है। कार्बन डाईआक्साइड का प्रभाव दिनों-दिन बढ़ने लगा है। ज़हरीली वायु अपना प्रभाव दिखाने लगी है। आज निर्माण कार्यों में जिस तरह से सीमेंट-कांक्रीट का विवेकहीन उपयोग हो रहा है, उससे पर्यावरण के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है। सीमेंट-कांक्रीट से मकान बनाने की पद्धति मूल रूप से युरोप-अमेरिका में अपनाई जाती है। ये ठंडे देश हैं। सीमेंट-कांक्रीट के मकान इन्हें गर्मी पहुंचाते हैं। भारत जैसे गर्म देश के लिए यह पद्धति बिलकुल भी ठीक नहीं है। इसीलिए आज हमें कई प्रदेशों में गर्मी के टापू देखने को मिल रहे हैं।

अधिक नहीं, आज से करीब 30 साल पहले सभी प्रांतों में स्थानीय मौसम के अनुसार मकानों का निर्माण होता था। मालाबार में अधिक बारिश होने के कारण वहां नारियल के पत्तों से ढलवां छत वाले मकान बनाए जाते थे। उधर सौराष्ट्र और कच्छ जैसे गर्म इलाकों में मिट्टी के खपरैल एवं लकड़ी वाले मकान बनाए जाते थे। खपरैल वाले मकान गर्मी में ठंडक पहुंचाते थे। ठंड में यही मकान हमें गर्मी देते थे। इन मकानों में मिट्टी का प्रयोग होता, जो दोनों ही स्थितियों में हमारी रक्षा करते थे। गर्मी में इन मकानों में पंखे की आवश्यकता ही नहीं होती थी।

आज कच्छ में इस तरह के मकान पर्यटकों को लुभाने लगे हैं, जिन्हें स्थानीय बोली में 'भूंगा' कहते हैं। ये चिकनी मिट्टी के ऐसे मकान होते हैं, जो गर्मी में ठंड और ठंड में गर्मी का अहसास कराते हैं। आजकल 5 सितारा होटलों में भी इस तरह के 'भूंगा' बनाए जाने लगे हैं। 20 लोग मिलकर एक भूंगा एक महीने में बना लेते हैं, एक भूंगे पर एक लाख रुपए खर्च आता है। कच्छ के अनपढ़ लोगों में यह समझ अच्छी तरह से है कि उनके लिए किस तरह के मकान में रहना ठीक है। इनकी जैसी समझ शहरों में रहकर पढ़ाई करने वाले आर्किटेक्टों में भी नहीं है। यदि मकानों में वेंटीलेशन की ही उचित व्यवस्था कर दी जाए, तो लाखों की बिजली बचाई जा सकती है। आजकल के मकानों में हवा के आने और जाने की कोई वैज्ञानिक पद्धति दिखाई नहीं देती।

'भूंगा' को बनाने में पारंपरिक पद्धति का इस्तेमाल किया जाता है। हमारे आसपास प्रचुर मात्रा में मिलने वाली चीज़ों का इस्तेमाल किया जाता है। मिट्टी, गारे, लकड़ी, चूना, गुड़, पत्थर, खपरैल आदि का बुद्धिमत्तापूर्वक इस्तेमाल किया जाए, तो हमारे मकान भी हमारे अनुकूल बन सकते हैं। हमारी पुरानी स्थापत्य कला को हम भूलते जा रहे हैं। अगर हम उसी का अनुकरण करें, तो एक-एक मकान से 60 से 80 प्रतिशत ऊर्जा की बचत कर सकते हैं।

हमारे देश में आधुनिक मकानों के निर्माण कार्य में ऊर्जा की बचत का विचार किया ही नहीं जाता। जिन देशों में हमारे देश जैसा ऊर्जा का संकट नहीं है, उन देशों की तुलना में हमारे देश में मकानों के निर्माण में चार से पांच गुना अधिक खर्च होता है। हमारे देश में आधुनिक मकानों में एक बरामदे का क्षेत्रफल सामान्यतः 9-10 वर्ग मीटर होता है। यदि मकान सीमेंट-कांक्रीट से बनाया जाता है, तो इतने क्षेत्र को ठंडा करने में एक टन क्षमता वाले एयरकंडीशनर की आवश्यकता होती है। मकान यदि लकड़ी का बनाया जाए, दीवारों पर मिट्टी-गारे का प्लास्टर करवाया जाए और छत पर खपरैल या कवेलू रखे जाएं, तो ऐसे मकान को ठंडा रखने के लिए 0.3 टन की क्षमता वाले एयरकंडीशनर की आवश्यकता होगी।

आधुनिक पद्धति में मकान की ऊर्जा बचत करने में प्रारंभिक खर्च अधिक आता है। पर उससे लंबे समय बाद लाभ होता है। अहमदाबाद में टॉरेंट फार्मास्यूटिकल्स रिसर्च लेबोरेटरी के मकान 12 एकड़ ज़मीन पर फैले हुए हैं। मकानों में एयरकंडीशनर के उपयोग को सीमित करने के लिए 'पेसिव डाउनड्राफ्ट इवेपोरेटिव कूलिंग' के रूप में पहचानी जाने वाली पद्धति का उपयोग किया गया है। मकानों के ऊपर ठंडी हवा को पकड़ने के लिए ऊंची-ऊंची चिमनियां लगाई जाती हैं। ऐसी चिमनियों के अंदर की हवा को ठंडा करने के लिए उसे ठंडे मटके के ऊपर से लाया जाता है। इसका अंतिम सिरा मकानों के अंदर पहुंचता है। यह पद्धति इतनी प्रभावकारी है कि अहमदाबाद जब 43-44 डिग्री में तपता रहता है, तब यहां का तापमान 29-30 डिग्री होता है।

यह पद्धति अभी खर्चीली है। हम इतना अधिक खर्च नहीं कर सकते। पर यदि हम तय कर लें कि हमें अपने देश के समयानुकूल मकान में ही रहना है, और मकान निर्माण में सीमेंट-कांक्रीट पर होने वाले खर्च को कम करना है, तो पुरानी पद्धति को आधुनिक तरीके से अपनाना होगा। हमें अपने मकानों को परंपरागत रूप से बनाना सीखना होगा, ताकि ऊर्जा की बचत हो सके। ***(स्रोत फीचर्स)***